1 हज़ार वर्षों के दौरान हुए परिवर्तनों की पड़ताल

0761CH01

मानचित्र 1
बारहवीं सदी के भूगोलवेत्ता अल-इद्रीसी का बनाया हुआ दुनिया के नक्शे का एक हिस्सा जिसमें भारतीय उपमहाद्वीप को भूमि से समुद्र तक दिखाया गया है।

मानचित्र 1 और 2 पर नज़र डालिए। मानचित्र 1 अरब भूगोलवेत्ता अल-इद्रीसी ने 1154 में बनाया था। यहाँ जो नक्शा दिया गया है वह उसके द्वारा बनाए गए दुनिया के बड़े मानचित्र का एक हिस्सा है और भारतीय उपमहाद्वीप को दर्शाता है। मानचित्र 2 एक फ्रांसीसी **मानचित्रकार** ने 1720 में बनाया था। दोनों नक्शे एक ही इलाके के हैं मगर उनमें काफ़ी अंतर हैं। अल-इद्रीसी के नक्शे में दक्षिण भारत उस जगह है जहाँ हम आज उत्तर भारत ढूँढेंगे और श्रीलंका का द्वीप ऊपर की तरफ़ है। जगहों के नाम अरबी

मानचित्रकार
जो व्यक्ति मानचित्र/नक्शे बनाता है।
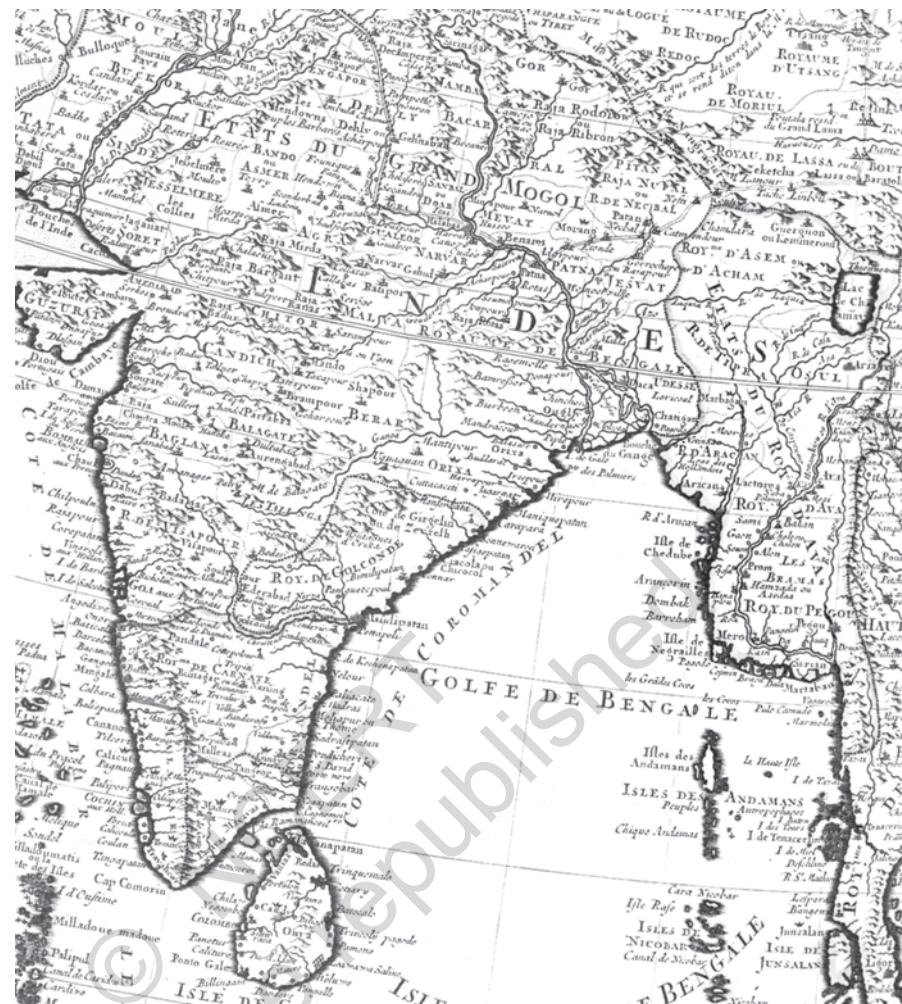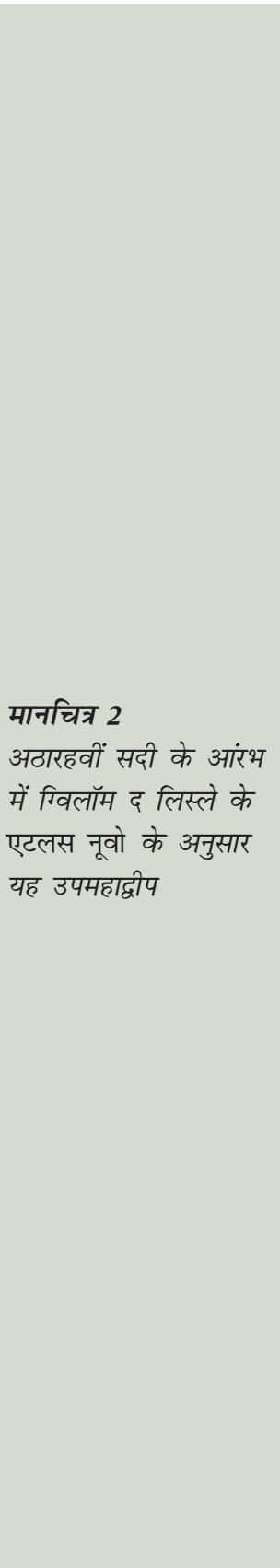
मानचित्र 2
अठारहवीं सदी के आरंभ में ग्विलॉम द लिस्ले के एटलस नूवो के अनुसार यह उपमहाद्वीप

में दिए गए हैं और उनमें कुछ जाने-पहचाने नाम भी हैं, जैसे कि उत्तर प्रदेश का कन्नौज। मानचित्र 2 पहले मानचित्र के बनने के लगभग 600 वर्ष बाद बनाया गया। इस कालावधि में उपमहाद्वीप के बारे में सूचनाएँ काफ़ी बदल गईं थीं। यह नक्शा हमें ज़्यादा परिचित लगेगा। उसमें विशेषकर तटीय इलाकों के बारीक ब्यौरे देखकर आश्चर्य होता है। यूरोप के नाविक तथा व्यापारी अपनी समुद्र यात्रा के लिए इस नक्शे का इस्तेमाल किया करते थे (देखें अध्याय 6)।

?

लेकिन अब भीतरी इलाकों पर नज़र डालें। क्या इनमें भी उतने ही ब्यौरे हैं जितने समुद्र तट वाले हिस्से में? गंगा के मार्ग को देखें। इसे किस तरह से दर्शाया गया है? इस मानचित्र में तटीय और भीतरी इलाकों के बीच ब्यौरों और बारीकी का जो अंतर है, आपके ख्याल में उसका कारण क्या है?

इतनी ही महत्त्वपूर्ण एक और बात यह है कि दूसरे युग तक मानचित्र-अंकन का विज्ञान भी बहुत बदल गया था। इतिहासकार जब बीते युगों के दस्तावेज़ों, नक्शों और लेखों का अध्ययन करते हैं तो उनके लिए उन सूचनाओं के संदर्भों का, उनकी भिन्न-भिन्न ऐतिहासिक पृष्ठभूमियों का ध्यान रखना ज़रूरी होता है।

नई और पुरानी शब्दावली

अगर समय के साथ-साथ सूचनाओं के संदर्भ बदलते हैं, तो भाषा और अर्थों के साथ क्या होता है? ऐतिहासिक अभिलेख कई तरह की भाषाओं में मिलते हैं और ये भाषाएँ भी समय के साथ-साथ बहुत बदली हैं। उदाहरण के लिए मध्ययुग की फ़ारसी, आधुनिक फ़ारसी भाषा से भिन्न है। यह भिन्नता सिर्फ़ व्याकरण और शब्द भंडार में ही नहीं आई है, समय के साथ शब्दों के अर्थ भी बदल जाते हैं।

उदाहरण के लिए 'हिंदुस्तान' शब्द ही लीजिए। आज हम इसे आधुनिक राष्ट्र राज्य 'भारत' के अर्थ में लेते हैं। तेरहवीं सदी में जब फ़ारसी के इतिहासकार मिन्हाज-ए-सिराज ने हिंदुस्तान शब्द का प्रयोग किया था तो उसका आशय पंजाब, हरियाणा और गंगा-यमुना के बीच में स्थित इलाकों से था। उसने इस शब्द का राजनीतिक अर्थ में उन इलाकों के लिए इस्तेमाल किया जो दिल्ली के सुलतान के अधिकार क्षेत्र में आते थे। सल्तनत के प्रसार के साथ-साथ इस शब्द के अंतर्गत आने वाले क्षेत्र भी बढ़ते गए, लेकिन हिंदुस्तान शब्द में दक्षिण भारत का समावेश कभी नहीं हुआ। इसके विपरीत, सोलहवीं सदी के आरंभ में बाबर ने हिंदुस्तान शब्द का प्रयोग इस उपमहाद्वीप के भूगोल, पशु-पक्षियों और यहाँ के निवासियों की संस्कृति का वर्णन करने के लिए किया। यह प्रयोग चौदहवीं सदी के कवि अमीर ख़ुसरो द्वारा प्रयुक्त शब्द 'हिंद' के ही कुछ-कुछ समान था। मगर जहाँ 'भारत' को एक भौगोलिक और सांस्कृतिक सत्त्व के रूप में पहचाना जा रहा था वहाँ हिंदुस्तान शब्द से वे राजनीतिक और राष्ट्रीय अर्थ नहीं जुड़े थे जो हम आज जोड़ते हैं।

क्या आपको ऐसे कुछ और शब्दों का ध्यान आता है जिनके अर्थ भिन्न-भिन्न संदर्भों में बदल जाते हैं?

किसी भी शब्द का प्रयोग करने में इतिहासकारों को बहुत सावधान रहना चाहिए क्योंकि अतीत में उन शब्दों के कुछ अलग ही अर्थ थे। उदाहरण के लिए 'विदेशी' जैसा सीधा-सादा शब्द ही ले लीजिए। हमारे लिए आज इसका अर्थ होता है, ऐसा व्यक्ति जो भारतीय न हो। मध्ययुग

में, मानो किसी गाँव में आने वाला कोई भी अनजाना व्यक्ति, जो उस समाज या संस्कृति का अंग न हो, 'विदेशी' कहलाता था। (ऐसे व्यक्ति को हिंदी में परदेसी और फ़ारसी में अजनबी कहा जा सकता है।) इसलिए किसी नगरवासी के लिए वनवासी 'विदेशी' होता था किंतु एक ही गाँव में रहने वाले दो किसान अलग-अलग धार्मिक या जाति परंपराओं से जुड़े होने पर भी एक-दूसरे के लिए विदेशी नहीं होते थे।

इतिहासकार और उनके स्रोत

इतिहासकार किस युग का अध्ययन करते हैं और उनकी खोज की प्रकृति क्या है, इसे देखते हुए वे अलग-अलग तरह के स्रोतों का सहारा लेते हैं। उदाहरण के लिए पिछले साल आपने गुप्तवंश के शासकों और हर्षवर्धन के बारे में पढ़ा। इस पुस्तक में हम मोटे तौर पर 700 से 1750 ईसवी तक लगभग हज़ार वर्षों के बारे में पढ़ेंगे।

इस काल के अध्ययन के लिए इतिहासकार जिन स्रोतों का प्रयोग करते हैं, उनमें आपको बहुत-सी बातें ऐसी मिलेंगी जो पिछले युग से वैसी ही चली आ रही हैं। इतिहासकार इस काल के बारे में सूचना इकट्ठी करने के लिए अभी भी सिक्कों, शिलालेखों, स्थापत्य (भवन निर्माण कला) तथा लिखित सामग्री पर निर्भर करते हैं। पर कुछ बातें पहले से काफ़ी भिन्न भी हैं। इस युग में प्रामाणिक लिखित सामग्री की संख्या और विविधता आश्चर्यजनक रूप से बढ़ गई। इसके आगे इतिहासकार सूचनाओं के दूसरे प्रकार के स्रोतों का इस्तेमाल धीरे-धीरे कम

कागज़ का मूल्य

इन दो प्रसंगों की तुलना कीजिए:

(1) तेरहवीं सदी के मध्य में एक विद्वान को एक पुस्तक की प्रतिलिपि की ज़रूरत पड़ी। उसके पास उतना कागज़ नहीं था इसलिए उसने एक ऐसी पांडुलिपि को धो डाला जिसकी उसे ज़रूरत नहीं थी, और उसके कागज़ को सुखाकर उसका इस्तेमाल कर लिया।

(2) एक सदी बाद अगर आप बाज़ार से कोई खाद्य पदार्थ खरीदते तो हो सकता है कि आपकी किस्मत अच्छी होती और दुकानदार वह वस्तु कागज़ में लपेटकर देता।

? *तो कागज़ कब अधिक महँगा था और कब आसानी से उपलब्ध था – तेरहवीं शताब्दी में या चौदहवीं शताब्दी में?*

करने लगे। इस समय के दौरान कागज़ क्रमश: सस्ता होता गया और बड़े पैमाने पर उपलब्ध भी होने लगा। लोग धर्मग्रंथ, शासकों के वृत्तांत, संतों के लेखन तथा उपदेश, अर्ज़ियाँ, अदालतों के दस्तावेज़, हिसाब तथा करों के खाते आदि लिखने में इसका उपयोग करने लगे। धनी व्यक्ति, शासक जन, मठ तथा मंदिर, पांडुलिपियाँ एकत्रित किया करते थे। इन पांडुलिपियों को पुस्तकालयों तथा **अभिलेखागारों** में रखा जाता है। इन पांडुलिपियों तथा दस्तावेज़ों से इतिहासकारों को बहुत सारी विस्तृत जानकारी मिलती है मगर साथ ही इनका उपयोग कठिन है।

उन दिनों छापेखाने तो थे नहीं, इसलिए लिपिक या नकलनवीस हाथ से ही पांडुलिपियों की प्रतिकृति बनाते थे। अगर आपने कभी किसी मित्र के गृहकार्य की नकल उतारी है तो आप जानते होंगे कि यह काम आसान नहीं है। कभी-कभी आपको अपने मित्र की लिखावट समझ में नहीं आती होगी और आपको मज़बूर होकर अंदाज़ ही लगाना पड़ता होगा कि क्या लिखा गया है। फलस्वरुप आपके लिखे में मित्र के लिखे हुए से कुछ छोटे-मोटे लेकिन
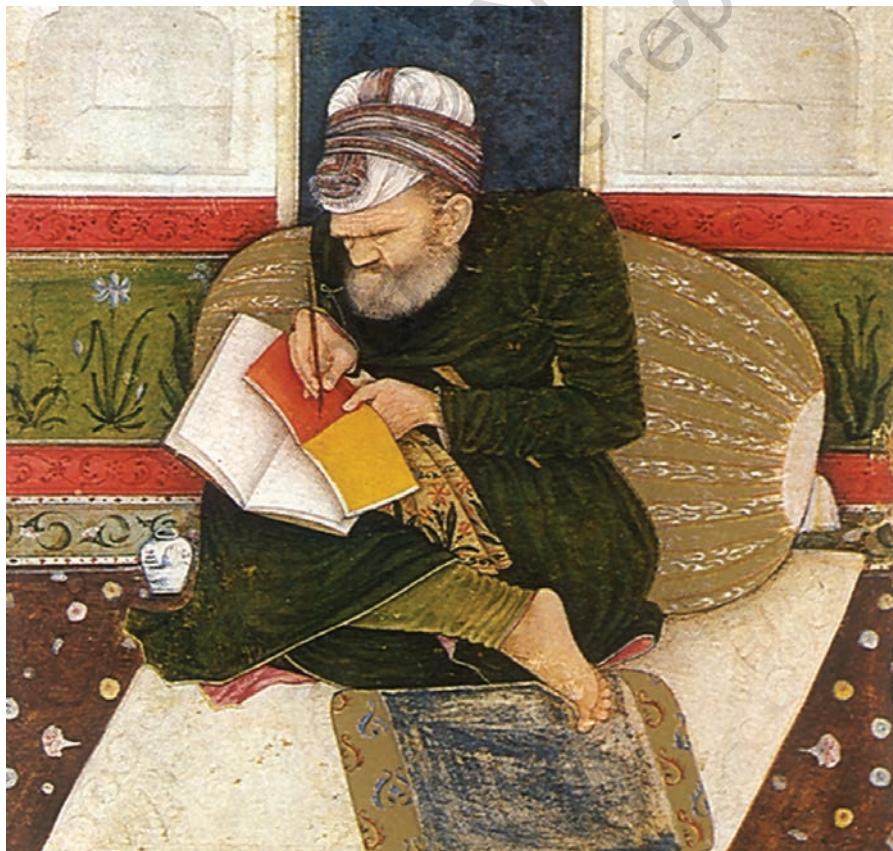
अभिलेखागार
ऐसा स्थान जहाँ दस्तावेज़ों और पांडुलिपियों को संग्रहित किया जाता है। आज सभी राष्ट्रीय और राज्य सरकारों के अभिलेखागार होते हैं जहाँ वे अपने तमाम पुराने सरकारी अभिलेख और लेन-देन के ब्यौरों का रिकॉर्ड रखते हैं।

चित्र 1
यह एक लघुचित्र की प्रतिकृति है जिसमें एक लिपिक किसी पांडुलिपि की नकल कर रहा है। इस चित्र का आकार सिर्फ़ 10.5 से.मी. x 7.1 से.मी. है। इस छोटे आकार के कारण इसे लघुचित्र या मिनियेचर कहा जाता है। कभी-कभी इन लघुचित्रों का प्रयोग लेख में आयी पांडुलिपियों को स्पष्टता प्रदान करने के लिए किया जाता था। ये इतने सुंदर होते थे कि आगे चलकर संग्रहकर्ता अकसर इन चित्रों को पांडुलिपियों से अलग करके बेचने लगे थे।
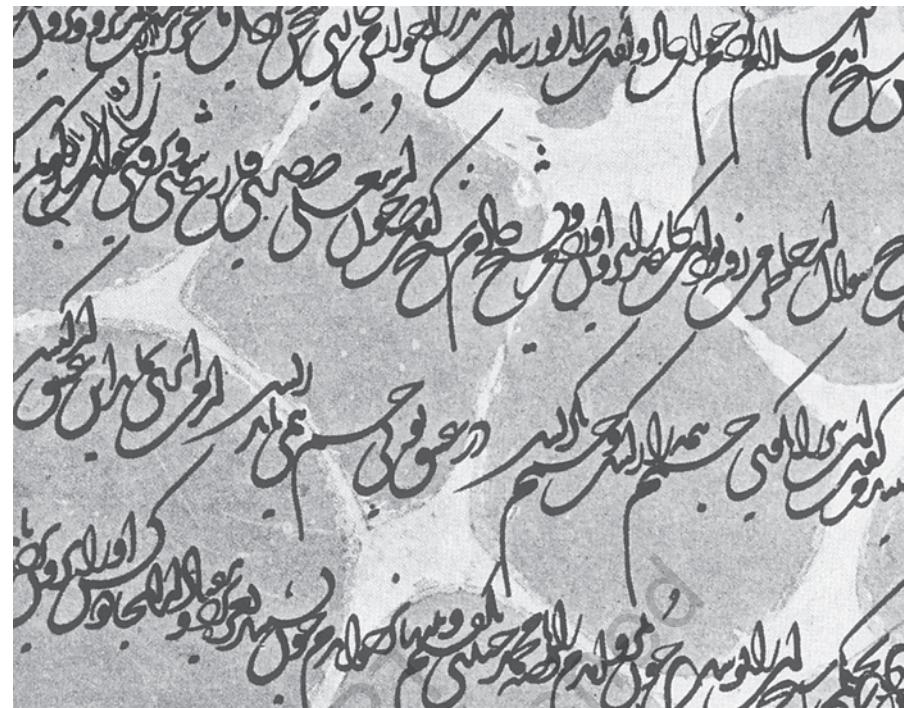
चित्र 2
लिखावट की भिन्न प्रकार की शैलियों के कारण फ़ारसी और अरबी पढ़ने में कठिनाई हो सकती है। नस्तलिक लिपि (बायीं ओर) में वर्ण जोड़कर धाराप्रवाह रूप से लिखे जाते हैं। फ़ारसी, अरबी के जानकारों के लिए इस लिपि को पढ़ना आसान होता है। शिक्स्त लिपि (दायीं ओर) अधिक सघन, संक्षिप्त और कठिन है।

महत्त्वपूर्ण अंतर आ जाते होंगे। पांडुलिपि की प्रतिलिपि बनाने में भी कुछ-कुछ यही होता है। प्रतिलिपियाँ बनाते हुए लिपिक छोटे-मोटे फ़ेर-बदल करते चलते थे, कहीं कोई शब्द, कहीं कोई वाक्य। सदी दर सदी प्रतिलिपियों की भी प्रतिलिपियाँ बनती रहीं और अंततः एक ही मूल ग्रंथ की भिन्न-भिन्न प्रतिलिपियाँ एक-दूसरे से बहुत ही अलग हो गईं। इससे बड़ी गंभीर समस्या उत्पन्न हो गई क्योंकि आज हमें लेखक की मूल पांडुलिपि शायद ही कहीं मिलती है। हमें बाद के लिपिकों द्वारा बनाई गई प्रतिलिपियों पर ही पूरी तरह निर्भर रहना पड़ता है। इसलिए इस बात का अंदाज़ लगाने के लिए कि मूलतः लेखक ने क्या लिखा था, इतिहासकारों को एक ही ग्रंथ की विभिन्न प्रतिलिपियों का अध्ययन करना पड़ता है।

कई बार लेखक स्वयं भी समय-समय पर अपने मूल वृत्तांत में संशोधन करते रहते थे। चौदहवीं शताब्दी के इतिहासकार ज़ियाउद्दीन बरनी ने अपना वृत्तांत पहली बार 1356 में और दूसरी बार इसके दो वर्ष बाद लिखा था। दोनों में अंतर है लेकिन 1971 तक इतिहासकारों को पहली बार वाले वृत्तांत की जानकारी ही नहीं थी। यह पुस्तकालयों के विशाल संग्रहों में कहीं दबा पड़ा था।

नए सामाजिक और राजनीतिक समूह

सन् 700 और 1750 के बीच के हज़ार वर्षों का अध्ययन इतिहासकारों के आगे भारी चुनौती रखता है, मुख्य रूप से इसलिए कि इस पूरे काल में बड़े पैमाने पर और अनेक तरह के परिवर्तन हुए। इस काल में अलग-अलग समय पर नई प्रौद्योगिकी के दर्शन होते हैं, जैसे, सिंचाई में रहट, कताई में चर्खे और युद्ध में आग्नेयास्त्रों (बारूद वाले हथियार) का इस्तेमाल। इस उपमहाद्वीप में नई तरह का खान-पान भी आया–आलू, मक्का, मिर्च, चाय और कॉफ़ी। ध्यान रहे कि ये तमाम परिवर्तन–नई प्रौद्योगिकियाँ और फ़सलें–उन लोगों के साथ आए जो नए विचार भी लेकर आए थे। परिणामस्वरूप यह काल आर्थिक, राजनीतिक, सामाजिक और सांस्कृतिक परिवर्तनों का भी काल रहा। अध्याय 5, 6 और 7 में आप इनमें से कुछ के बारे में जानेंगे।

इस युग में लोगों की गतिशीलता–एक स्थान से दूसरे स्थान पर आना-जाना भी बहुत बढ़ गया था। अवसर की तलाश में लोगों के झुंड के झुंड दूर-दूर की यात्राएँ करने लगे थे। इस उपमहाद्वीप में अपार संपदा और अपना भाग्य गढ़ने के लिए अपार संभावनाएँ मौजूद थीं। इस काल में जिन समुदायों का

चित्र 3
रहट
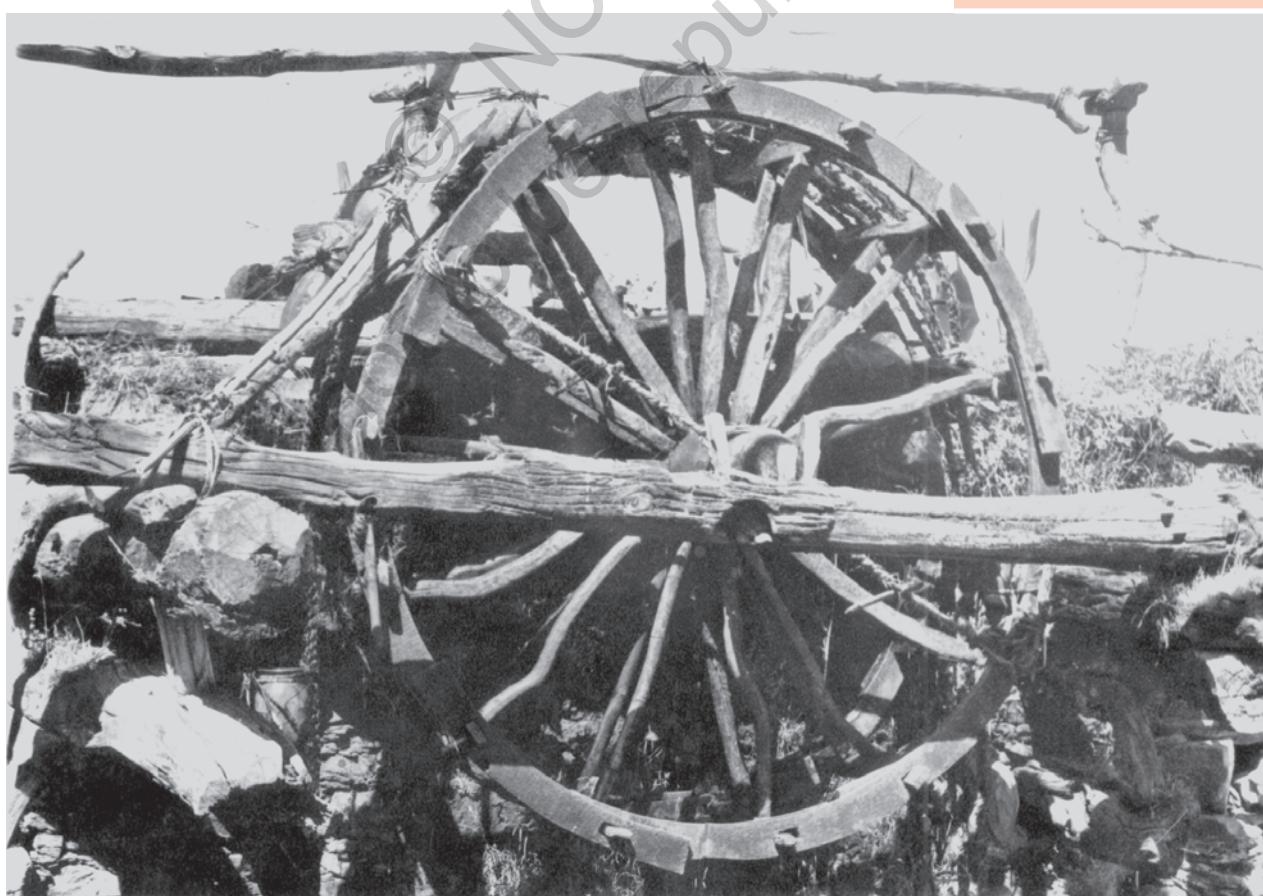
महत्त्व बढ़ा उनमें से एक समुदाय था राजपूत, जिसका नाम 'राजपुत्र' (अर्थात् राजा का पुत्र) से निकला है। आठवीं से चौदहवीं सदी के बीच यह नाम आमतौर पर योद्धाओं के उस समूह के लिए प्रयुक्त होता था जो क्षत्रिय वर्ण के होने का दावा करते थे। 'राजपूत' शब्द के अंतर्गत केवल राजा और सामंत वर्ग ही नहीं, बल्कि वे सेनापति और सैनिक भी आते थे जो पूरे उपमहाद्वीप में अलग-अलग शासकों की सेनाओं में सेवारत थे। कवि और चारण राजपूतों की आचार संहिता–प्रबल पराक्रम और स्वामिभक्ति–का गुणगान करते थे। इस युग में राजनीतिक दृष्टि से महत्त्व हासिल करने के अवसरों का लाभ मराठा, सिक्ख, जाट, अहोम और कायस्थ (मुख्यत: लिपिकों और मुंशियों का कार्य करने वाली जाति) आदि समूहों ने भी उठाया।

पर्यावास
इसका तात्पर्य किसी भी क्षेत्र के पर्यावरण और वहाँ के रहने वालों की सामाजिक और आर्थिक जीवन शैली से है।

इस पूरे काल के दौरान क्रमश: जंगलों की कटाई हो रही थी और खेती का इलाका बढ़ता जा रहा था। कुछ क्षेत्रों में यह परिवर्तन अन्य क्षेत्रों की अपेक्षा अधिक तेजी से और पूरे तौर पर हुआ। **पर्यावास** में परिवर्तन के कारण कई वनवासियों को मज़बूर होकर अपना स्थान छोड़ना पड़ा। कुछ और वनवासी ज़मीन की जुताई करने लगे और कृषक बन गए। कृषकों के ये नए समूह क्षेत्रीय बाज़ार, मुखियाओं, पुजारियों, मठों और मंदिरों से प्रभावित होने लगे। वे बड़े और जटिल समाजों के अंग बन गए। उन्हें कर चुकाने पड़ते थे और स्थानीय मालिक वर्ग की बेगार करनी पड़ती थी। परिणामस्वरूप किसानों के बीच आर्थिक और सामाजिक अंतर उभरने लगे। कुछ के पास ज़्यादा उपजाऊ ज़मीन होती थी, कुछ लोग मवेशी भी पालते थे और कुछ लोग खेती से खाली समय में दस्तकारी आदि का कुछ काम कर लेते थे। जैसे-जैसे समाज में अंतर बढ़ने लगे, लोग जातियों और उपजातियों में बाँटे जाने लगे और उनकी पृष्ठभूमि और व्यवसाय के आधार पर उन्हें समाज में ऊँचा या नीचा दर्जा दिया जाने लगा। ये दर्जे स्थायी नहीं थे। किसी जाति विशेष के सदस्यों के हाथों में कितनी सत्ता, प्रभाव और संसाधनों का नियंत्रण है, इसके आधार पर उसके दर्जे बदलते रहते थे। एक ही जाति का किसी क्षेत्र में कोई दर्जा हो सकता था, और किसी अन्य क्षेत्र में कोई और।

?

इस अनुभाग में जो प्रौद्योगिकीय, आर्थिक, सामाजिक और सांस्कृतिक परिवर्तन वर्णित हैं, उनमें से कौन-कौन से परिवर्तन आपकी समझ में आपके शहर या गाँव में सबसे महत्त्वपूर्ण रहे?

अपने सदस्यों के व्यवहार का नियंत्रण करने के लिए जातियाँ स्वयं अपने-अपने नियम बनाती थीं। इन नियमों का पालन जाति के बड़े-बुजुर्गों की एक सभा करवाती थी जिसे कुछ इलाकों में 'जाति पंचायत' कहा जाता था। लेकिन जातियों को अपने निवास के गाँवों के रिवाजों का पालन भी करना पड़ता था। इसके अलावा कई गाँवों पर मुखियाओं का शासन होता था। मिल-मिलाकर वे किसी राज्य की एक छोटी इकाई भर होती थीं।

क्षेत्र और साम्राज्य

चोल (अध्याय 2), तुग़लक़ (अध्याय 3) या मुग़ल (अध्याय 4) जैसे बड़े-बड़े राज्यों के अंतर्गत कई सारे क्षेत्र आ जाते थे। दिल्ली के सुलतान ग़यासुद्दीन बलबन (1266-1287) की प्रशंसा में एक संस्कृत प्रशस्ति (प्रशस्ति के उदाहरण के लिए अध्याय 2 देखिए) में उसे एक विशाल साम्राज्य का शासक बताया गया है जो पूर्व में बंगाल (गौड़) से लेकर पश्चिम में अफ़गानिस्तान के ग़ज़नी (गज्जन) तक फैला हुआ था, और जिसमें संपूर्ण दक्षिण भारत (द्रविड़) भी आ जाता था। गौड़, आंध्र, केरल, कर्नाटक, महाराष्ट्र और गुजरात आदि भिन्न-भिन्न क्षेत्रों के लोग उसकी सेना के आगे
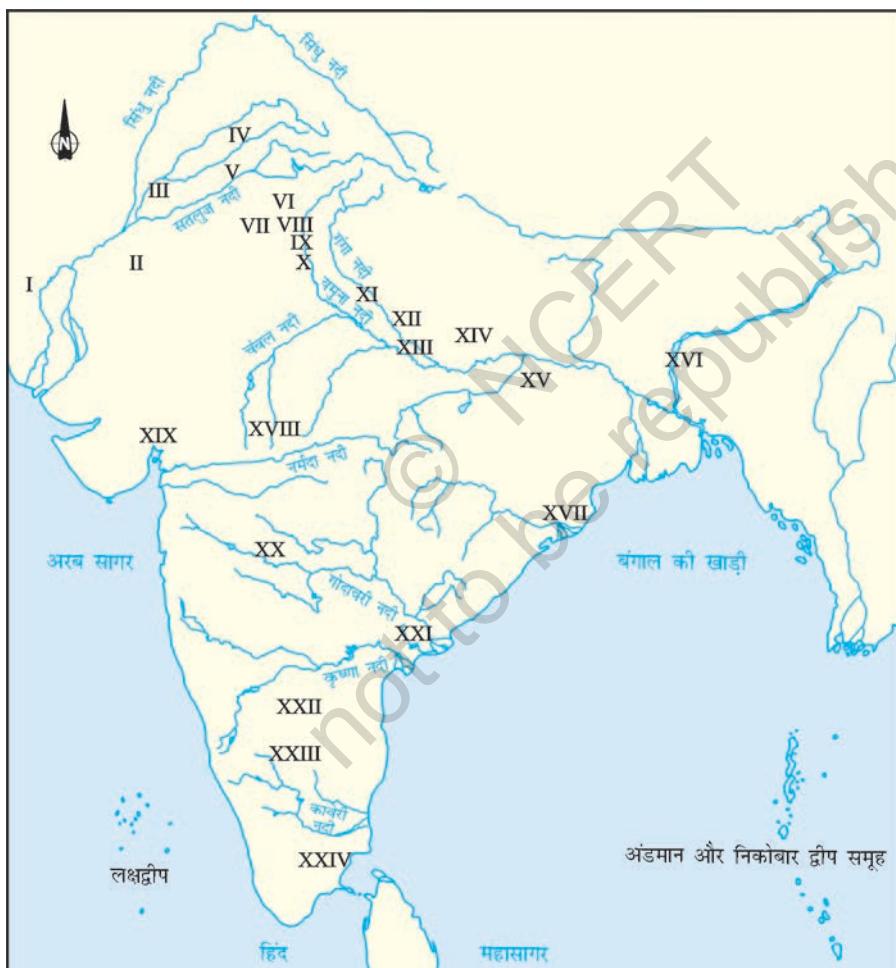
I सिविस्तान	VII सरसुती	XIII कड़ा	XIX गुजरात
II उच्छ	VIII कुहराम	XIV अवध	XX देवगिरी
III मुल्तान	IX हाँसी	XV बिहार	XXI तेलंगाना
IV कलानौर	X दिल्ली	XVI लखनौती	XXII तैलंग
V लाहौर	XI बदायूँ	XVII जाजनगर	XXIII द्वारसमुद्र
VI समाना	XII कन्नौज	XVIII मालवा	XXIV माबार

मानचित्र 3
मिस्र के शिहाबुद्दीन उमरी द्वारा रचित मसालिक अल-अबसर फ़ि ममालिक अल-अमसर *के अनुसार मुहम्मद तुग़लक़ के राज्यकाल में दिल्ली सल्तनत के अंतर्गत आने वाले प्रांत।*

आप क्या समझते हैं, शासक ऐसे दावे क्यों करते थे?

पलायन कर जाते थे। इतिहासकार विजय अभियान के इन दावों को अतिशयोक्तिपूर्ण मानते है। साथ ही वे यह समझने की कोशिश में भी लगे रहते हैं कि शासक लोग इस उपमहाद्वीप के भिन्न-भिन्न भागों पर अपने अधिकार का उल्लेख क्यों करते रहते हैं।

भाषा तथा क्षेत्र

सन् 1318 में कवि अमीर ख़ुसरो ने इस बात पर गौर किया था कि

इस देश के हर क्षेत्र की एक अलग भाषा है : सिंधी, लाहौरी, काश्मीरी, द्वारसमुद्री (दक्षिण कर्नाटक में), तेलंगानी (आंध्र प्रदेश में), गूजरी (गुजरात में), मअबारी (तमिलनाडु में), गौड़ी (बंगाल में)...अवधी (पूर्वी उत्तर प्रदेश में) और हिंदवी (दिल्ली के आस-पास के क्षेत्र में)।"

अमीर ख़ुसरो ने आगे बतलाया है कि इन भाषाओं के विपरीत एक भाषा संस्कृत भी है जो किसी विशेष क्षेत्र की भाषा नहीं है। यह एक प्राचीन भाषा है "*जिसे केवल ब्राह्मण जानते हैं, आम जनता नहीं।*"

अमीर ख़ुसरो द्वारा उल्लिखित भाषाओं की एक सूची बनाइए। और एक सूची उन भाषाओं के नामों की बनाइए जो उनके द्वारा उल्लिखित क्षेत्रों में आज बोली जाती हैं : जो नाम एक से हैं उन्हें रेखांकित कीजिए और जो नाम भिन्न हैं उनके चारों ओर घेरा खींच दीजिए।

? *क्या आपने ध्यान दिया है कि समय के साथ भाषाओं के नाम बदल गए हैं?*

सन् 700 तक कई क्षेत्रों के अपने-अपने भौगोलिक आयाम तय हो चुके थे और उनकी अपनी भाषा तथा सांस्कृतिक विशेषताएँ स्पष्ट हो गई थीं। अध्याय 9 में आपको इनके बारे में और अधिक जानकारी मिलेगी। ये क्षेत्र, विशेष शासक राजवंशों से भी जुड़ गए थे। इन राज्यों के बीच काफ़ी टकराहटें चलती रहती थीं। कभी-कभी चोल, ख़लजी, तुग़लक़ और मुग़ल जैसे राजवंश अनेक क्षेत्रों में फैला एक विशाल साम्राज्य भी खड़ा कर लेते थे। ये सभी साम्राज्य समान रूप से स्थिर या सफल नहीं हो पाते थे। उदाहरण के लिए अध्याय 3 और अध्याय 4 की तालिका 1 की तुलना कीजिए। ख़लजी और मुग़ल वंश के शासन कितनी-कितनी अवधि तक चले?

अठारहवीं सदी में मुग़ल वंश पतन के ढलान पर था। फलस्वरूप क्षेत्रीय राज्य फिर से उभरने लगे (अध्याय 10)। लेकिन वर्षों से जो सर्वक्षेत्रीय साम्राज्यों का शासन चल रहा था उससे क्षेत्रों की प्रकृति बदल गई थी। उन पर कई छोटे-बड़े राज्यों का शासन चलता रहा था और उन राज्यों की बहुत-सी बातें इस उपमहाद्वीप के अधिकतर भाग पर फैले इन क्षेत्रों को विरासत में मिली थीं। इस तथ्य का पता हमें उन कई परंपराओं से लगता है जो इन क्षेत्रों में उभरी थीं। इन परंपराओं में कुछ एक-दूसरी से भिन्न और कुछ एक समान हैं। ऐसी परंपराएँ हमें प्रशासन, अर्थव्यवस्था के प्रबंधन, उच्च संस्कृति तथा भाषा के संदर्भ में मिलती हैं। सन् 700 से लेकर 1750 के बीच के हज़ार वर्षों में इन विभिन्न क्षेत्रों की प्रकृति एक-दूसरे से कटकर अलग-अलग नहीं पनपी थीं। हालाँकि उनके चरित्र की अपनी विशिष्टताएँ बनी रही थीं, मगर समन्वय की सर्वक्षेत्रीय ताकतों का प्रभाव भी उन पर पड़ा था।

?

पता लगाइए कि क्या आपका राज्य कभी इन सर्वक्षेत्रीय साम्राज्यों का हिस्सा रहा था? यदि रहा था, तो कितने समय तक?

पुराने और नए धर्म

इतिहास के जिन हज़ार वर्षों की पड़ताल हम कर रहे हैं, इनके दौरान धार्मिक परंपराओं में कई बड़े परिवर्तन आए। दैविक तत्त्व में लोगों की आस्था कभी-कभी बिल्कुल ही वैयक्तिक स्तर पर होती थी मगर आम तौर पर इस आस्था का स्वरूप सामूहिक होता था। किसी दैविक तत्त्व में सामूहिक आस्था, यानि धर्म, प्रायः स्थानीय समुदायों के सामाजिक और आर्थिक संगठन से संबंधित होती थी। जैसे-जैसे इन समुदायों का सामाजिक संसार बदलता गया वैसे ही इनकी आस्थाओं में भी परिवर्तन आता गया।

?

क्या आपको संस्कृत, ज्ञान एवं ब्राह्मणों के बारे में अमीर ख़ुसरो की टिप्पणियाँ याद हैं?

आज हम जिसे हिंदू धर्म कहते हैं, उसमें भी इसी युग में महत्त्वपूर्ण बदलाव आए। इन परिवर्तनों में से कुछ थे—नए देवी-देवताओं की पूजा, राजाओं द्वारा मंदिरों का निर्माण और समाज में पुरोहितों के रूप में ब्राह्मणों का बढ़ता महत्त्व तथा बढ़ती सत्ता आदि।

संस्कृत ग्रंथों के ज्ञान के कारण समाज में ब्राह्मणों का बड़ा आदर होता था। इनके **संरक्षक** थे, नए-नए शासक जो स्वयं प्रतिष्ठा की चाह में थे। इन संरक्षकों का समर्थन होने के कारण समाज में इनका दबदबा और भी बढ़ गया था।

संरक्षक
कोई प्रभावशाली, धनी व्यक्ति जो किसी कलाकार, शिल्पकार विद्वान या अभिजात जैसे किसी अन्य व्यक्ति को मदद या सहारा दे।

इस युग में एक महत्त्वपूर्ण परिवर्तन भक्ति की अवधारणा के रूप में आया। इसमें ईश्वर की कल्पना एक ऐसे प्रेमल ईष्ट देवी-देवता के रूप में की गई थी जिस तक पुजारियों के विशद कर्मकांड के बिना ही भक्त स्वयं पहुँच सकें। इस विषय में, और साथ ही दूसरी परंपराओं के बारे में आपको अध्याय 8 में जानकारी मिलेगी।

यही वह युग था जिसमें इस उपमहाद्वीप में नए-नए धर्मों का भी आगमन हुआ। कुरान शरीफ़ का संदेश भारत में पहले-पहल सातवीं सदी में व्यापारियों और आप्रवासियों के ज़रिए पहुँचा। मुसलमान, क़ुरान शरीफ़ को अपना धर्मग्रंथ मानते हैं, केवल एक ईश्वर–अल्लाह–की सत्ता को स्वीकार करते हैं जिसका प्रेम, करुणा और उदारता अपने में आस्था रखने वाले हर व्यक्ति को गले लगाता है चाहे उस व्यक्ति की सामाजिक पृष्ठभूमि कुछ भी रही हो।

कई शासक इस्लाम और इसके विद्वान धर्मशास्त्रियों और न्याय-शास्त्रियों अर्थात् उलेमा को संरक्षण देते थे। हिंदू धर्म की ही भाँति इस्लाम के अनुयायी भी अपने धर्म की अलग-अलग तरह से व्याख्या करते थे। मुसलमानों में कुछ शिया थे जो पैगंबर साहब के दामाद अली को मुसलमानों का विधिसम्मत नेता मानते थे, और कुछ सुन्नी थे जो खलीफ़ाओं के प्रभुत्व को स्वीकार करते थे। इस्लाम के आरंभिक दौर में इस धर्म का नेतृत्व करने वाले खलीफ़ा कहलाते थे और आगे भी इनकी परंपरा चलती रही। इस्लामी न्याय सिद्धांत (विशेषकर भारत में हनफ़ी और शफ़ी ऐसे सिद्धांत हैं) की विभिन्न परंपराओं में भी कई महत्त्वपूर्ण अंतर रहे हैं। ऐसे ही धर्म-सिद्धांतों तथा रहस्यवादी विचारों को लेकर विभिन्नताएँ देखने को मिलती हैं।

समय और इतिहास के कालखंडों पर विचार

इतिहासकार समय को केवल घड़ी या कैलेंडर की तरह नहीं देखते यानी कि केवल घंटों, दिन या वर्षों के बीतने के रूप में ही नहीं देखते हैं। उनका नज़रिया यह है कि समय सामाजिक और आर्थिक संगठन में आने वाले परिवर्तनों को झलकाता है, यह दिखलाता है कि विचारों और विश्वासों में कितना स्थायित्व रहा है और कितना परिवर्तन आया है। यदि अतीत को समान विशेषता रखनेवाले कुछ बड़े-बड़े हिस्सों–युगों या कालों–में बाँट दिया जाए तो समय का अध्ययन कुछ आसान हो जाता है।

उन्नीसवीं सदी के मध्य में अंग्रेज़ इतिहासकारों ने भारत के इतिहास को तीन युगों में बाँटा था: 'हिंदू', 'मुसलिम' और 'ब्रिटिश'। यह विभाजन इस

विचार पर आधारित था कि शासकों का धर्म ही एकमात्र महत्त्वपूर्ण ऐतिहासिक परिवर्तन होता है और अर्थव्यवस्था, समाज और संस्कृति में और कोई भी महत्त्वपूर्ण बदलाव नहीं आता। इस दृष्टिकोण में इस उपमहाद्वीप की अपार विविधता की भी उपेक्षा हो जाती थी।

इस काल विभाजन को आज बहुत कम इतिहासकार ही स्वीकार करते हैं। अधिकतर इतिहासकार आर्थिक तथा सामाजिक कारकों के आधार पर ही अतीत के विभिन्न कालखंडों की विशेषताएँ तय करते हैं। पिछले साल आपने जो इतिहास पढ़े थे उसमें प्राचीन समाजों के कई प्रकारों का समावेश था- जैसे शिकारी-संग्राहक, प्रारंभिक दौर के कृषिकर्मी, शहरों और गाँवों के निवासी और प्रारंभिक दौर के राज्य और साम्राज्य। इस साल आप जो इतिहास पढ़ेंगे उसे प्रायः मध्यकालीन इतिहास कहा जाता है। इसमें आपको कृषक समाजों के विस्तार, क्षेत्रीय और साम्राज्यिक राज्यों के उदय, कभी-कभी तो ग्रामवासियों और वनवासियों की कीमत पर, प्रधान धर्मों के रूप में हिंदू धर्म, इस्लाम धर्म के विकास और यूरोप से व्यापारी कंपनियों के आगमन के बारे में और विस्तार से जानकारी मिलेगी।

भारत के इतिहास के ये हज़ार साल अनेक बदलावों के साक्षी रहे हैं। आखिर, सोलहवीं और अठारहवीं शताब्दियाँ आठवीं या ग्यारहवीं शताब्दियों से काफ़ी भिन्न थीं। इसलिए इस सारे काल को एक ऐतिहासिक इकाई के रूप में देखना समस्याओं से खाली नहीं है। फिर, 'मध्यकाल' की तुलना प्रायः 'आधुनिक काल' से की जाती है। आधुनिकता के साथ भौतिक उन्नति और बौद्धिक प्रगति का भाव जुड़ा हुआ है। इससे आशय यह निकलता है कि मध्यकाल रूढ़िवादी था और उस दौरान कोई परिवर्तन हुआ ही नहीं। लेकिन हम जानते हैं कि ऐसा नहीं था।

इन हज़ार वर्षों के दौरान इस उपमहाद्वीप के समाजों में प्रायः परिवर्तन आते रहे और कई क्षेत्रों की अर्थव्यवस्था तो इतनी समृद्ध हो गई थी कि उसने यूरोप की व्यापारी कंपनियों को भी आकर्षित करना आरंभ कर दिया। इस पुस्तक को पढ़ते समय आप परिवर्तन के चिह्नों तथा यहाँ सक्रिय ऐतिहासिक प्रक्रियाओं पर ध्यान देते चलें। और, जब भी संभव हो, इस पुस्तक में आप जो पढ़ रहे हैं उसकी तुलना आप पिछले वर्ष पढ़ी हुई बातों से करने की कोशिश करें। जहाँ भी संभव हो, यह देखें कि कहाँ बदलाव हुए हैं और कहाँ नहीं, और आज अपने आस-पास की दुनिया पर नज़र डालकर भी यह देखें कि और भी क्या कुछ बदला है या वैसा ही रहा है।

कल्पना करें

आप एक इतिहासकार है। इस अध्याय में उल्लिखित कोई एक विषय–आर्थिक, सामाजिक या राजनैतिक इतिहास–चुनिए और समझाइए कि आपके विचार में उसकी जानकारी हासिल करना क्यों दिलचस्प होगा।

बीज शब्द

पांडुलिपि

जाति

क्षेत्र

काल–विभाजन

फिर से याद करें

1. अतीत में 'विदेशी' किसे माना जाता था?

2. नीचे उल्लिखित बातें सही हैं या गलत :

   (क) सन् 700 के बाद के काल के संबंध में अभिलेख नहीं मिलते हैं।

   (ख) इस काल के दौरान मराठों ने अपने राजनीतिक महत्त्व की स्थापना की।

   (ग) कृषि-केंद्रित बस्तियों के विस्तार के साथ कभी-कभी वनवासी अपनी ज़मीन से उखाड़ बाहर कर दिए जाते थे।

   (घ) सुलतान ग़यासुद्दीन बलबन असम, मणिपुर तथा कश्मीर का शासक था।

3. रिक्त स्थानों को भरें :

   (क) अभिलेखागारों में ______________ रखे जाते हैं।

   (ख) ______________ चौदहवीं सदी का एक इतिहासकार था।

   (ग) ________, ________, ________, ________ और ________ इस उपमहाद्वीप में इस काल के दौरान लाई गई कुछ नई फसलें हैं।

4. इस काल में हुए कुछ प्रौद्योगिकीय परिवर्तनों की तालिका दें।

5. इस काल के दौरान हुए कुछ मुख्य धार्मिक परिवर्तनों की जानकारी दें।

आइए समझें

6. पिछली कई शताब्दियों में 'हिंदुस्तान' शब्द का अर्थ कैसे बदला है?

7. जातियों के मामले कैसे नियंत्रित किए जाते थे?

8. सर्वक्षेत्रीय साम्राज्य से आप क्या समझते हैं?

आइए विचार करें

9. पांडुलिपियों के उपयोग में इतिहासकारों के सामने कौन-कौन सी समस्याएँ आती हैं?

10. इतिहासकार अतीत को कालों या युगों में कैसे विभाजित करते हैं? क्या इस कार्य में उनके सामने कोई कठिनाई आती है?

आइए करके देखें

11. अध्याय में दिए गए मानचित्र 1 अथवा मानचित्र 2 की तुलना उपमहाद्वीप के आज के मानचित्र से करें। तुलना करते हुए दोनों के बीच जितनी भी समानताएँ और असमानताएँ मिलती है, उनकी सूची बनाइए।

12. पता लगाइए कि आपके गाँव या शहर में अभिलेख (रिकॉर्ड) कहाँ रखे जाते हैं। इन अभिलेखों को कौन तैयार करता है? क्या आपके यहाँ कोई अभिलेखागार है? उसकी देखभाल कौन करता है? वहाँ किस तरह के दस्तावेज़ संग्रहित हैं? उनका उपयोग कौन लोग करते हैं?